वेदों में पर्यावरण बोध -अरण्यानी सूक्त

डॉ रेखा मिश्रा

विषय- हिंदी, राजकीय महाविद्यालय निवाई (टोंक)

भारतीय संस्कृति में मनुष्य का प्रकृति के सभी घटकों के साथ वैदिक काल से ही मातृवत भाव रहा है। प्राचीन काल में ऋषियों ने आश्रम में ज्ञान और साधना के केंद्र बनाए थे।ये सभी आश्रम वनों के शांत निर्मल और स्वच्छंद वातावरण में होते थे। इसी पर्यावरण में ऋषियों ने अपने शिष्यों के साथ रहकर ब्रह्मांड के भौतिक और आध्यात्मिक मूर्त और अमूर्त तथ्यों का चिंतन करते हुए जीवन पद्धति का विकास किया था जो भारतीय ज्ञान परंपरा रही है। भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही मानव, प्रकृति का संरक्षण परिवर्धन करते हुए उसके सानिध्य में सुख प्राप्त करता रहा है। वैसे भी प्रत्येक पारिस्थितिकी तंत्र में उसकी जीवनदायी विशिष्टताएं सम्मिलित होती है ,जिनके अनुसार ही उस पारिस्थितिकी तंत्र के प्राणियों का जीवन क्रम चलता रहता है। वेदों में प्रकृति और मानव के संतुलन पर जोर दिया गया है तथा प्रकृति के साथ सहजीवन हेतु कई नियम बनाए गए हैं वैदिक संहिता में प्राचीनतम ऋग्वेद में प्रकृति की ही देवी माना गया है। विश्व में प्रकृति को 'मातृभूमि अहम् पुत्रो पृथिका।' कहकर पृथ्वी को मातृवत पूजा है। वेदों में कृषि कर्म पर बल दिया गया जो कि गोबर युक्त गंधवती पृथ्वी (गंधद्वारां दुराधार्वां नित्यपुष्टां करिषिणीं) का सार है। इसी कारण सभी प्राणियों का हित करने वाली पृथ्वी 'अदिति इयं वे पृथिव्यदिति' कहलाई। मानव का समस्त जीवन चक्र इस पृथ्वी पर ही संपन्न होता है, अतः पृथ्वी के पर्यावरण का संरक्षण एवं परिवर्तन आज भी आवश्यक है। तभी मानव जीवन पुनः सुखमय बन सकेगा और इस वैदिक प्रार्थना को आशीर्वाद के रूप में ग्रहण कर सकेगा कि

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्
पश्येम शरदः शतम् जीवेम शरदः शतम् ।
श्रृणुयाम शरदः शतम् प्रब्रवाम शरदः शर्त
भूपश्च शरदः शतात्।।

वैदिक काल में आरण्यको में पशु-पक्षियों, जीव जंतुओं,पेड़ पौधों, मानव एवं मानवेतर प्राणियों का आपस में साहचर्य भाव था। 'आत्मवत सर्वभूतेषु' जैसी चेतना ही आरण्यकों में विकसित हुई है । अरण्यानी सूक्त ऋग्वेद के दशम मंडल के 146 में भाग में संकलित है।

आज प्रकृति को बचाने हेतु विश्व के सभी देश अपने-अपने स्तर पर भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसी चेतना मानव ने वेदोपनिषद काल में ही प्राप्त कर ली थी। तब मानव ने जान लिया था कि वनस्पति एवं पशु पक्षियों के साथ रहकर ही अपने जीवन को बचाए रखा जा सकता है। इस वातावरण में सभी का जीवन तभी बचा रहेगा। अन्यथा परस्पर साथ के बिना एक दूसरे का जीवन का बचना सम्भव नहीं है। ऋग्वेद के दशम मंडल का अरण्यानी सूक्त प्रकृति वानस्पतिक सौंदर्य के नष्ट होने के कारण देवमुनि एरम्मद के पश्चाताप से भरा हुआ है -

अरण्यान्यरण्यान्यसौ या प्रेव नश्यति ।
कथा ग्रामं न पृच्छसि न त्वा भीरिव विन्दती ।।
ऋ.10 (146) (1)

देवमुनि एरम्मद कई दिनों के प्रवास के पश्चात जब अपने आश्रम में लौटते हैं तो आश्रम के आसपास के अन्य अरण्यानियों को सूखा देखकर दुखी हो जाते हैं। पहले चारों तरफ हरियाली थी, हरे भरे फल फूलों से लदे वृक्ष लताएं थी पक्षी कलरव करते थे, गाय भैंस चराते थे, मनुष्य इन पशु पक्षियों के आकर्षण में बंधकर इन स्थलों के आसपास निवास करता था। ये अरण्यानियां फल -फूलों, नदी-तालाबों एवं औषधीयों से भरी होने के साथ-साथ बंसी व वीणा वादन से हर समय संगीतमय रहती थी।

वृषारवाय वदते यदुषावति चिंचिकः।
आघाटि भिरिव धाव यन्नरण्यानिर्महीयते ।।

ऋ.10(146) (2)

(जब चहचहाता हुआ चीचिका पक्षी वन पशु की दहाड़ का जवाब देता है। वन की अप्सरा घंटिया या झांझ की झनकार के साथ पायल की झंकार जैसी ध्वनि के साथ दौड़ती हैं।)

देवमुनि एरम्मद अरण्यानी की ऐसी स्थिति से व्यथित होकर कहते हैं-

उतगाव इवादन्त्युत वेश्मेव दृश्यते।
उतो अरण्यानिःसायं शकटारिव सर्जति।।

ऋ.10(146) (3)

कभी ये अरण्यानियां पशुओं को चारा देती थी, हरे भरे पेड़ पोधौं और औषधीयों से हमेशा ही भरी रहती थी, आज वही सूखी और रसहीन घास और तिनकों के रूप में दिखाई देती हैं। छकड़ा गाड़ियों में शाम तक अरण्यानियोंसे घास को लाया जाता था,वहां अब सूना है। तात्पर्य है कि संपन्न वन उजाड़, सूने और सायं कालीन वातावरण में परिवर्तित हो गया है। इसकी पीड़ा और चिंता इन सूक्तों में दिखाई देती है।

इस सूक्त में देव मुनि आरम्मत ने पर्यावरण के विनाश से होने वाले खतरों से भी सचेत किया है-

गामङ्गैष आह्वयति दार्वङ्गैषो अपावधीत् ।
वसन्नरण्यां सायमकुक्षदिति मन्यते ।।

ऋ.10(146) (4)

इस अरण्यानी में कोई अपनी गाय को बुला रहा है, कोई लकड़ी काट रहा है। शाम होते ही वन के समीप निवास करने वाले को लगता है कि अरण्यानी की आवाज सुन रहे हैं। इस हिमाच्छादित क्षेत्र में देवदारू और शाल के वृक्ष बहुत अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। इन वृक्षों के अत्यधिक बहुमूल्य होने के कारण अरण्यानियों में चोरी छिपे इन वृक्षों को काट लेते थे। दिन के समय में तो किसी भी व्यक्ति के लिए इन वृक्षों को काटना और उनको चोरी करके ले जाना संभव नहीं होता था किंतु शाम के समय और रात के अंधेरे में लोग इनको काट करके छकड़ा गाड़ियों में भरकर ले जाते थे। देवमुनि वन देवी से प्रार्थना करते हैं कि अरण्यानियों के रूप में विनष्ट होने वाली अपनी इन पुत्रियों की रक्षा करें -

न वा अरण्यानिः हन्त्य न्यश्चेन्नाभि गच्छति ।
स्वाहौः कलयः जगध्याय यथाकामं निपद्यते ।।

ऋ.10(146) (5)

अरण्यानी देवी तब तक किसी को कोई हानि नहीं पहुंचाती है जब तक कोई शत्रु उसके पास में आ जाए। यह वन देवी स्वादिष्ट फल प्रदान करने वाली हैं और वनवासी अपनी इच्छा के अनुसार फल खा करके वही बस जाते हैं। वनदेवी से देवमुनि एरम्मद कहते हैं कि हम सबको मिलकर ऐसा कोई उपाय सोचना होगा जिससे कोई दुष्ट प्रवृति का व्यक्ति इन अरण्यानियों को नष्ट न कर सके। हम सभी को सावधान भी रहना होगा ताकि भविष्य में भी कोई प्रकृति की अनदेखी नहीं करें क्योंकि यदि यह हमसे नाराज होकर कहीं चली गई तो फिर हम सब का इससे अहित ही है। देवमुनि यहां पहले की भांति वन देवी को प्रसन्न होकर फल- फूल, औषधि आदि प्रदान करने और पहले की जैसे ही

यहां हरियालियों से भरा हुआ वन बना रहे, इसके लिए वह सबका पुनः नित्य परिश्रम करके वृक्षारोपण करने के लिए आह्वान कर रहे हैं। यहां स्पष्ट हो रहा है कि मनुष्य की लापरवही से मानव मात्र के लिए उपयोगी होने वाली यह प्राकृतिक संपदा नष्ट हो रही हैं और इस सम्पदा को नष्ट करने वाला स्वयं मानव ही है। इन प्राकृतिक संपदाओं को नष्ट कर मनुष्य स्वयं अपने दुर्भाग्य को स्वयं ही न्यौत रहा है। देवमुनि कहते हैं कि कितने प्रकार के अंजाने गंध युक्त पदार्थ, जड़ी बूटियां एवं औषधीयां यह वन देवी उत्पन्न कर रही हैं। इन जड़ी बूटियों और औषधियों का उत्पादन और कृषि संबंधी अनुसंधान इन अरण्यानियों और आश्रमों में होता रहता है। यह वन संपदा मानव मात्र के लिए ही नहीं अपितु प्राणी मात्र के लिए परम उपयोगी है, इसके नष्ट हो जाने से मानव को अत्यधिक हानि उठानी पड़ेगी। इस प्रकार ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त विकसित पर्यावरणीय रक्षा का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। वैदिक काल में हमारे पर्यावरण की रक्षा मानव और प्रकृति के पारस्परिक संबंधों की चेतना से युक्त है।

आंजनिगन्धिं सुरभिं बह्वन्नाम कृषीबलं ।
प्राहं मृगाणां मातरमरण्या निमशंसिषम् ।।

ऋ.10(146) (6)

यह अरण्यानी देवी जीवन ऊर्जा के रूप में पारिस्थितिकी तंत्र को हमेशा बनाए रखती हैं। यह गांव के समीप नहीं आती अपितु जंगलों में ही निवास करती है। ऋग्वेद के अरण्यानी सूक्त में प्रकृति रूपी अरण्यानी (वन) देवी का वर्णन हुआ है। यह अरण्यानी सूक्त विकसित पर्यावरणीय बोध का श्रेष्ठ उदाहरण है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि आधुनिकता की चकाचौंध में डूबी हुई और भौतिकता की अंधी दौड़ में दौड़ती हुई दुनिया अपने पूर्व के आदर्शों को भूला बैठी हैं और आज इसी कारण पर्यावरणीय असंतुलन बढ़ता जा रहा है। हमें पुनः अपने सांस्कृतिक विरासत से मिले इन सूत्रों को आत्मसात करना होगा तभी मनुष्य पूर्व की भांति सहज और निरोगी जीवन यापन कर सकेगा।